स्थानकवासी परम्परा के एक अध्यात्मकवि

श्री नेमिचन्द्रजी महाराज

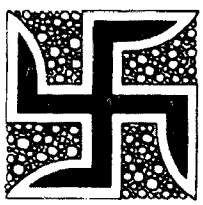

☆ श्री देवेन्द्र मुनि शास्त्री

☐

सन्त साहित्य भारतीय साहित्य का जीवनसत्व है। साधना के अमर-पथ पर निरन्तर प्रगति करते हुए आत्म-बल के धनी संतों ने जिस सत्य के दर्शन किये उसे सहज, सरल एवं बोधगम्य वाणी द्वारा 'सर्वजन सुखाय, सर्वजन हिताय' अभिव्यक्त किया। जीवन काव्य के रचयिता, आत्मसंगीत के उद्गाता, संतों ने अपनी विमल वाणी में जो अनमोल विचार रत्न प्रस्तुत किये हैं, वे युग-युग तक मानवों को अन्तस्श्रेयस की ओर प्रतिपल-प्रतिक्षण बढ़ने की पवित्र प्रेरणा देते रहेंगे। संतों के विचारों की वह अमर ज्योति जो हृदयस्पर्शी पदों में व्यक्त हुई है, वह कभी भी बुझ नहीं सकती, उसका शाश्वत प्रकाश सदा जगमगाता रहेगा। उनकी काव्य सुरसरि का प्रवाह कभी सूखेगा नहीं किन्तु बहता ही रहेगा जिसका सेवन कर मानव अमरत्व को उपलब्ध कर सकता है।

कविवर्य नेमीचन्द्र जी महाराज एक क्रान्तद्रष्टा, विचारक संत थे। वे विकारों व रूढ़ियों से लड़े और स्थिति-पालकों के विरुद्ध उन्होंने क्रान्ति का शंख फूंका, विपरीत परिस्थितियाँ उन्हें डिगा नहीं सकीं और विरोध उन्हें अपने लक्ष्य से हिला नहीं सका। वे मेरु और हिमाद्रि की तरह सदा स्थिर रहे, जो उनके जीवन की अद्भुत सहिष्णुता, निर्भीकता और स्पष्टवादिता का प्रतीक है। वे सत्य को कटु रूप में कहने में भी नहीं हिचके। यही कारण है कि उनकी कविता में कबीर का फक्कड़पन है और आनन्दघन की मस्ती है और समयसुन्दर की स्वाभाविकता है। साथ ही उनमें ओज, तेज और संवेग है।

कवि बनाये नहीं जाते किन्तु वे उत्पन्न होते हैं। यद्यपि कविवर नेमीचन्द महाराज ने अलंकार शास्त्र, रीति-ग्रन्थ और कवित्व का विधिवत शिक्षण प्राप्त किया हो ऐसा ज्ञात नहीं होता। जब हृदय में भावों की बाढ़ आयी और वे बाहर निकलने के लिए छटपटाने लगे तब सारपूर्ण शब्दों का सम्बल पाकर कविता बन गयी। कवि पर काव्य नहीं किन्तु काव्य पर कवि छाया है। उनके कवित्व में व्यक्तित्व और व्यक्तित्व में कवित्व इस तरह समाहित हो गया है जैसे जल और तरंग। उनकी अपनी शैली है, लय है, कंपन है और संगीत है।

उनकी कविताओं में कहीं कमनीय कल्पना की ऊँची उड़ान है, कहीं प्रकृति नटी का सुन्दर चित्रण है तो कहीं शब्दों की सुकुमार लड़ियाँ और कड़ियाँ हैं, भक्ति व शान्तरस के साथ-साथ कहीं पर वीररस और कहीं पर करुणरस प्रवाहित हुआ है। यह सत्य है कि कवि की सूक्ष्म कल्पना प्रकृति-चित्रण करने की अपेक्षा मानवीय भावों का आलेखन करने में अधिक सक्षम रही है। कवि के जीवन में अध्यात्म का अलौकिक तेज निखर रहा है, उसकी वाणी तपःपूत है और उसमें संगीत की मधुरता भी है।

कविवर्य नेमीचन्द जी महाराज एक विलक्षण प्रतिभासम्पन्न संत थे। वे आशुकवि थे, प्रखर प्रवक्ता थे, आगम साहित्य धर्म और दर्शन के मर्मज्ञ विद्वान् थे और सरल, सरस लोकप्रिय काव्य के निर्माता थे।

नेमीचन्द जी महाराज का लम्बा कद, श्याम वर्ण, विशाल भव्य भाल, तेजस्वी नेत्र, प्रसन्न वदन और श्वेत परिधान से ढके हुए रूप को देखकर दर्शक प्रथम दर्शन में ही प्रभावित हो जाता था। वह ज्यों-ज्यों अधिकाधिक मुनिश्री के सम्पर्क में आता त्यों-त्यों उसे सहजता, सरलता, निष्कपटता, स्नेही स्वभाव, उदात्त चिन्तन व आत्मीयता की सहज अनुभूति होने लगती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपश्री का जन्म विक्रम संवत् १९२५ में आश्विन शुक्ला चतुर्दशी को उदयपुर राज्य के बगगुन्दा (मेवाड़) में हुआ। आपके पूज्य पिताश्री का नाम देवीलाल जी लोढ़ा और माता का नाम कमलादेवी था।

बचपन से ही आपका झुकाव सन्त-सतियों की ओर था। प्रकृति की उन्मुक्त गोद में खेलना जहाँ उन्हें पसन्द था वहाँ उन्हें सन्त-सतियों के पावन उपदेश को सुनना भी बहुत ही पसन्द था।

आचार्यसम्राट् पूज्य श्री अमरसिंह जी महाराज के छठे पट्टधर आचार्य श्री पूनमचन्दजी महाराज एक बार विहार करते हुए बगडुन्दा पधारे। पूज्यश्री के त्याग-वैराग्ययुक्त प्रवचनों को सुनकर आपश्री के मन में वैराग्य भावना उद्बुद्ध हुई और आपने दीक्षा लेने की उत्कट भावना अपने परिजनों के समक्ष व्यक्त की। किन्तु पुत्र-प्रेम के कारण उनकी आँखों से अश्रु छलक पड़े। उन्होंने अनेक अनुकूल और प्रतिकूल परीषह देकर उनके वैराग्य का परीक्षण किया, किन्तु, जब वैराग्य का रंग धुँधला न पड़ा तब विक्रम संवत् १९४० में फाल्गुन शुक्ल छठ को बगडुन्दा ग्राम में आचार्य प्रवर पूनमचन्दजी महाराज के पास आर्हती दीक्षा ग्रहण की।

आप में असाधारण मेधा थी। अपने विद्यार्थी जीवन में इकतीस हजार पद्यों को कण्ठस्थ कर अपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया। आचाराङ्ग, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, विपाक आदि अनेक शास्त्र आपने कुछ ही दिनों में कण्ठस्थ कर लिये और सैकड़ों (स्तोक) थोकड़े भी कंठस्थ किए। आपने अठाणु बोल का बासठिया एक मुहूर्त में याद कर सभी को विस्मित कर दिया।

आप आशुकवि थे। चलते-फिरते वार्तालाप करते या प्रवचन देते समय जब भी इच्छा होती तब आप कविता बना देते थे।

एक बार आप समदड़ी गाँव में विराज रहे थे। पोष का महीना था। बहुत ही तेज सर्दी पड़ रही थी। रात्रि में सोने के लिए एक छोटा-सा कमरा मिला। छह साधु उस कमरे में सोये। असावधानी से रजोहरण की दण्डी पर पैर लग गया जिससे वह डण्डी टूट गयी। आपने उसी समय निम्न दोहा कहा :—

ओरी मिल गयी सांकड़ी, साधू सूता खट्ट।
नेमीचन्दरी डांडी भागी, बटाक देता बट्ट॥

आपश्री ने रामायण, महाभारत, गणधर चरित्र, रुक्मिणी मंगल, भगवान ऋषभदेव, भगवान् महावीर आदि पर अनेक खण्डकाव्य और महाकाव्य विभिन्न छन्दों में बनाये थे किन्तु आपश्री उन्हें लिखते नहीं थे जिसके कारण आज वे अनुपलब्ध हैं। क्या ही अच्छा होता यदि वे स्वयं लिखते या अन्यों से लिखवाते तो वह बहुमूल्य साहित्य सामग्री नष्ट नहीं होती।

आप प्रत्युत्पन्न मेधावी थे। जटिल से जटिल प्रश्नों का समाधान भी शीघ्रातिशीघ्र कर देते थे। आपश्री के समाधान आगम व तर्कसम्मत होते थे। यही कारण है कि गोगुन्दा, पंचभद्रा, पारलू आदि अनेक स्थलों पर दया-दान के विरोधी सम्प्रदायवाले आप से शास्त्रार्थ में परास्त होते रहे।

एक बार आचार्यप्रवर श्री पूनमचन्दजी महाराज गोगुन्दा विराज रहे थे। उससमय एक अन्य जैन सम्प्रदाय के आचार्य भी यहाँ पर आये हुए थे। मार्ग में दोनों आचार्यों का मिलाप हो गया। उन आचार्य के एक शिष्य ने आचार्य श्री पूनमचन्दजी महाराज के लिए पूछा—"थांने भेख पेहरयाँ ने कितराक बरस हुआ है।" कविवर्य नेमीचन्द जी महाराज ने उस साधु को भाषा समिति का परिज्ञान कराने के लिए उनके आचार्य के सम्बन्ध में पूछा। "थाँने हाँग पेहर्याँ ने कितराक बरस हुआ है।" यह सुनते ही वह साधु चौंक पड़ा और बोला—'यों कांई बोलो हो ?' आपने कहा 'हम तो सदा दूसरे के प्रति पूज्य शब्दों का ही प्रयोग करते हैं, किन्तु आपने हमारे आचार्य के लिए जिन निकृष्ट शब्दों का प्रयोग किया, उसी का आपको परिज्ञान कराने हेतु मैंने इन शब्दों का प्रयोग किया है।' साधु का सिर लज्जा से झुक गया और भविष्य में इस प्रकार के शब्दों का हम प्रयोग नहीं करेंगे कहकर उसने क्षमायाचना की।

आपश्री के बड़े गुरुभ्राता श्री ज्येष्ठमलजी महाराज थे जो एक अध्यात्मयोगी सन्त थे। रात्रि भर खड़े रहकर ध्यान-योग की साधना करते थे जिससे उनकी वाचा सिद्ध हो गयी थी। और वे पंचम आरे के केवली के रूप में विश्रुत थे। उनके दिव्य प्रभाव से प्रभावित होकर आपश्री भी ध्यान-योग की साधना किया करते थे। ध्यानयोग की साधना से आपका आत्मतेज इतना अधिक बढ़ गया था कि भयप्रद स्थान में भी आप पूर्ण निर्भय होकर साधना करते थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक बार आपश्री का चातुर्मास निंबाहेड़ा (मेवाड़) में था। वहाँ पर साहूडों की छह मंजिल की एक भव्य बिल्डिंग थी। उस हवेली में कोई भी नहीं रहता था। महाराजश्री ने लोगों से पूछा—यह हवेली खाली क्यों पड़ी है ? इसमें लोग क्यों नहीं रहते हैं जबकि गाँव में यह सबसे बढ़िया हवेली है ? लोगों ने भय से काँपते हुए कहा—महाराज श्री ! इस हवेली में भूत का निवास है जो किसी को भी शांति से रहने नहीं देता। महाराजश्री ने कहा—यह स्थान बहुत ही साताकारी है। हम इसी स्थान पर वर्षावास करेंगे। लोगों ने महाराजश्री को भयभीत करने के लिए अनेक बातें कहीं, किन्तु महाराजश्री ने उनकी बातों पर ध्यान न देकर वहीं चातुर्मास किया। चार माह तक किसी को कुछ भी नहीं हुआ। आध्यात्मिक साधना से भूत का भय मिट गया।

इसी तरह कम्बोल गाँव में सेठ मनरूपजी लक्ष्मीलालजी सोलंकी का मकान भयप्रद माना जाता था। वहाँ पर भी चातुर्मास कर उस स्थान को भयमुक्त कर दिया।

वि. सं. १९५९ में नेमीचन्द जी महाराज तिरपाल पधारे और आपश्री के उपदेश से श्री प्यारचन्दजी और भैरूलाल जी दोनों भ्राताओं ने भागवती दीक्षा ग्रहण की और माता तीजबाई ने तथा सोहनकुंवरजी ने भी महासती रामकुवंरजी महाराज के पास दीक्षा ग्रहण भी। महासती सोहनकुंवरजी महाराज बहुत ही भाग्यशाली, प्रतिभा सम्पन्न चारित्रनिष्ठा सती थीं।

आपश्री की प्रवचन शैली अत्यधिक चित्ताकर्षक थी। आगम के गहन रहस्यों को जब लोक भाषा में प्रस्तुत करते थे तब जनता झूम उठती थी। आपकी मेघ गम्भीर गर्जना को सुनकर श्रोतागण चकित हो जाते थे। रात्रि के प्रवचन की आवाज शान्त वातावरण में दो मील से अधिक दूर तक पहुँचती थी। और जब श्रीकृष्ण के पवित्र चरित्र का वर्णन करते उस समय का दृश्य अपूर्व होता था।

कविवर्य नेमीचन्दजी महाराज श्रेष्ठ कवि थे। उनका उदय हमारे साहित्याकाश में शारदीय चन्द्रमा की तरह हुआ। उन्होंने अपने निर्मल व्यक्तित्व और कृतित्व की शारदीय स्निग्ध ज्योत्स्ना से साहित्य संसार को आलोकित किया तथा दिग्दिगन्त में शुभ्र शीतल प्रभाव को विकीर्ण करते रहे। वे एक ऐसे विरले रस-सिद्ध कवियों में से थे जिन्होंने एक ही साथ अज्ञ और विज्ञ, साक्षर-निरक्षर सभी को समान रूप से प्रभावित किया। उनकी रचनाओं में जहाँ पर आत्म-जागरण की स्वर लहरी झनझना रही है, वहाँ पर मानवता का नाद भी मुखरित है। जन-जन के मन में अध्यात्मवाद के नाम पर निराशा का संचार करना कवि को इष्ट नहीं है, किन्तु वह आशा और उल्लास से कर्मरिपु को परास्त करने की प्रबल प्रेरणा देता है। पराजितों को विजय के लिए उत्प्रेरित करता है।

मुनिश्री की उपलब्ध सभी रचनाओं का संकलन 'नेमवाणी' के रूप में मैंने किया है। नेमवाणी का पारायण करते समय पाठक को ऐसा अनुभव होता है कि वह एक ऐसे विद्युत् ज्योतित उच्च अट्टालिका के बन्द कमरे में बैठा हुआ है, दम घुट रहा है, कि सहसा उसका द्वार खुल गया है और पुष्पोद्यान का शीतल मन्द समीर का झोंका उसमें आ रहा है, जिससे उसका दिल व दिमाग तरो-ताजा बन रहा है। कभी उसे गुलाब की महक का अनुभव होता है तो कभी चम्पा की सुगन्ध का। कभी केतकी केवड़े की सौरभ का परिज्ञान होता है तो कभी जाई जुही की मादक गन्ध का।

प्रस्तुत कृति का निर्माण काल, संवत १९४० से १९७५ के मध्य का है। उस युग में निर्मित रचनाओं के साथ आपके पद्यों की तुलना की जाय तो ज्ञात होगा कि आपके पद्यों में नवीनता है, मंजुलता है और साथ ही नया शब्द-विन्यास भी। मुख्यतः राजस्थानी भाषा का प्रयोग करने पर भी यत्र-तत्र विशुद्ध हिन्दी व उर्दू शब्दों का प्रयोग भी हुआ है। सन्त कवि होने के नाते भाषा के गज से कविता को नापने की अपेक्षा भाव से नापना अधिक उपयुक्त है।

नेमवाणी की रचनाएँ दो खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड में विविध विषयों पर रचित पद हैं, तो द्वितीय खण्ड में चरित्र है। प्रथम खण्ड में जो गीतिकाएँ गई हैं उनमें कितनी ही गीतिकाएँ स्तुतिपरक हैं। कवि का भावुक भक्त हृदय प्रभु के गुणों का उत्कीर्तन करता हुआ अघाता नहीं है। वह स्वयं तो झूम-झूम कर प्रभु के गुणों को गा ही रहा है साथ ही अन्य भक्तों को प्रेरणा दे रहा है कि तुम भी प्रभु के गुणों को गाओ।

"नव पद को भवियण ध्यान धरो।
यो पनरिया यंत्र तो शुद्ध भरो....."

कवि सन्त हैं, संसार की मोहमाया में भूले-भटके प्राणियों का पथ-प्रदर्शन करना उनका कार्य है। वह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जागृति को सन्देश देता है—कि क्यों सोये पड़े हो ! उठो ! जागो ! और अपने कर्त्तव्य को पहचानो ! कवि के शब्दों में ही देखिए—जागृति का सन्देश—

"कुण जाणे काल का दिन की
या दिन की, तन की, धन की रे····
एक दिन में देव निपजाई
या द्वारापुरी कंचन की रे·····"

अभिमान का काला नाग जिसे डस जाता है, वह स्व-रूप को भूल जाता है और पर-रूप में रमण करने लगता है, कवि उसे फटकारता हुआ कह रहा है—

"मिजाजी ढोला, टेढ़ा क्यों चालो छकिया मान में
मदिरा का झोला,
जैसे तू आयी रे तोफान में ॥
टेढ़ी पगड़ी बंट के जकड़ी
ढके कान एक आँख ।
पटा बंक सा बिच्छु डङ्क सा
रहा दर्पण में मुख झाँक ॥

आगमिक तात्त्विक बातों को भी कवि ने अत्यधिक सरल भाषा में संगीत के रूप में प्रस्तुत किया है । कवि गुणस्थानों की मार्गणा के सम्बन्ध में चिन्तन करता हुआ कहता है—

"इण पर जीवडो रे गुणठाणे फिरे ॥
प्रथम गुणस्थाने रे मारग चार कह्या,
तीन चार पंच सातो रे ।
गुणठाणे दूजे रे मारग एक छे,
पडतां पैले मिथ्यातो रे ॥"

द्रव्य-नौकरी की तरह कवि भाव-नौकरी का वर्णन करता है—सम्यक्दृष्टि जीव से लेकर जिनेश्वरदेव तक नौकरी का चित्रण करते हुए कवि लिखता है—

"काल अनन्ता हो गया सरे, कर्जा बढ़ा अपार ।
खर्चा को लेखो नहीं सरे, नफा न दीसे लगार रे ॥
अति मेंगाई घर में तंगाई, अर्ज करूँ तुम साथ ।
दरबार सुँ कुण मिलण देवे, बात मुसुद्दी हाथ ॥"

लौकिक त्यौहार, शीतला का, कवि आध्यात्मिक दृष्टि से सुन्दर विश्लेषण करता है । शीतला का शीतल पदार्थों से पूजन होता है तो कवि क्षमा रूपी माता शीतला का पूजन इस प्रकार करता है—

'सम्यक्त रंग की मेंहदी है राची, थारा रूप तणो नहीं पार ।
मद्दव रूप खर की असवारी, खूब किया सिणगार है ॥
म्हारी भाव भवानी क्षम्या माता ए पूजूं शीतला ।
दान शीयल तप भावना सरे, देव गुरु ने धर्म ॥
शील सातम ये सातों पूजियां, तूटे आठों ही कर्म है ।
म्हारी भाव भवानी क्षम्या माता ए पूजूं शीतला ॥

स्थानाङ्गसूत्र में वैराग्य-उत्पत्ति के दस कारण बताये हैं । कवि ने उसी बात को कविता की भाषा में इस रूप में रखा है—

'सुणो सुणो नर नार, वैराग उपजे जीव ने दश परकार ।
ज्यारो घणो अधिकार, शास्त्र में ज्यांरो है बहु विस्तार ॥
पहले बोले साधुजी रो दर्शन होय ।
मृगापुत्र नी परे·····लीजोजी जोय ॥

इसी तरह जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति के आधार से आपने 'भरत पच्चीसी' का निर्माण किया जिसमें संक्षेप में सम्राट् भरत के षट्खण्ड के दिग्विजय का वर्णन है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दौलत मुनि और हंस मुनि की कम्बल तस्कर ले जाने पर आपश्री ने भजन निर्माण किया जिसमें कवि की सहज प्रतिभा का चमत्कार देखा जा सकता है।

पूज्यश्री पूनमचन्दजी महाराज के जीवन का संक्षेप में परिचय भी दिया है जो ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

निह्नव सप्तढालिया का ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यधिक महत्त्व है। कवि मानवता का पुजारी है, मानवता के विरोधियों पर उसकी वाणी अंगार बनकर बरसती है, अनाचार की धुरी की तोड़ने के लिए और युग की तह में छिपी हुई बुराइयों को नष्ट करने के लिए उनका दिल क्रांति से उद्वेलित हो उठा है। वे विद्रोह के स्वर में बोले हैं, उनकी कमजोरियों पर तीखे बाण कसे हैं और साथ ही अहिंसा की गम्भीर मीमांसा प्रस्तुत की है।

पक्खी की चौबीसी में अनेक ऐतिहासिक, पौराणिक और आगमिक कथाएँ दी गयी हैं और क्षमा का महत्त्व प्रतिपादन किया गया है। लोक-कथाएँ भी इसमें आयी हैं।

नेम-वाणी के उत्तरार्द्ध में चरित्र कथाएँ हैं। क्षमा के सम्बन्ध में गजसुकुमार, राजा प्रदेशी, स्कन्दक मुनि, और आचार्य अमरसिंहजी महाराज आदि के चार उदाहरण देकर विषय का प्रतिपादन किया है। दान, शील, तप और भावना के चरित्र में एक-एक विषय पर एक-एक कथा दी गया है। नमस्कार महामन्त्र पर तीन कथाएँ दी गई हैं। महाव्रत की सुरक्षा के लिए ज्ञाताधर्म कथा की कथा को कवि ने बड़े ही सुन्दर रूप से चित्रित किया है। लंकापति रावण की प्रेरणा से उत्प्रेरित होकर महारानी मन्दोदरी सीता के सन्निकट पहुँची। उसने रावण के गुणों का उत्कीर्तन किया, किन्तु जब सीता विचलित न हुई और वह उल्टे पैरों लौटने लगी तब सीता ने उसे फटकारते हुए कहा—

"पाछी जावण लागी बोल वचन सुण अब को।
उभी रहे मन्दोदरी नार लेती जा लब को॥
अब सुण ले मेरी बात राम जो रूठो।
थाने लाम्बी पहरासी हाथ हियो क्यों फूटो।
थारो अल्प दिनों को सुख जाणजे खूटो।
यो सतियों केरो मुख वचन नहीं झूठो।
मो वचन जो झूठो होय जगत् होय डब को॥"

जब लक्ष्मण ने रावण पर चक्र का प्रयोग किया उस समय का सजीव चित्रण कवि ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि पढ़ते ही पाठक की भुजाएँ फड़फड़ाने लगती हैं। रणभेरी की गूँज, वीर हृदय की कड़क और कायर-जन की धड़क स्पष्ट सुनायी देती है। देखिए—

"लक्ष्मण कलकल्यो कोप में परजल्यो,
कड़कड़ी भीड़ ने चक्र वावे।
आकाशे भमावियो सणण चलावियो,
जाय वैरी नो शिरच्छेद लावे॥
हरि रे कोपावियो चक्र चलावियो॥

जोधपुर के राजा की लावणी में क्रूर काल की छाया का सजीव चित्रण किया गया है। मानव मन में विविध कल्पनाएँ करता है और भावी के गर्भ में क्या होने वाला है उसका उसे पता नहीं होता। चेतन चरित्र में भावना प्रधान चित्र हुआ है। वस्तुतः इस चरित्र में कवि की प्रतिभा का पूर्णरूप से निखार हुआ है। इसमें शान्तरस की प्रधानता है। कवि की वर्णन शैली आकर्षक है।

इस प्रकार कविवर्य नेमीचन्दजी महाराज की कविता का भाव और कलापक्ष अत्यन्त उज्ज्वल व उदात्त है। जैन श्रमण होने के नाते उनकी कविता में उपदेश की भी प्रधानता है। साथ ही मानव-जीवन का चरमोत्कर्ष ही उनकी कविता का संलक्ष्य है। कविवर्य का जीवन साधनामय जीवन था और १९८५ वि० सं० में छीपा का आकोला गाँव में आपका चातुर्मास था। शरीर में व्याधि होने पर संल्लेखनापूर्वक संथारा कर कार्तिक शुक्ला पंचमी को आप स्वर्गस्थ हुए। आपका विहारस्थल मेवाड़, मारवाड़, मालवा, ढूंढार, प्रभृति रहा है।

आपश्री अपने युग के एक तेजस्वी सन्त थे। आपने विराट् कविता साहित्य का सृजन किया। आपकी कविता स्वान्तःसुखाय होती थी। आपने अपने व्यक्तित्व के द्वारा जैनधर्म की प्रबल प्रभावना की। आप दार्शनिक थे, वक्ता थे, कवि थे और इन सबसे बढ़कर सन्त थे। आपका व्यक्तित्व और कृतित्व दिल को लुभाने वाला और मन को मोहने वाला था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org